नईदुनिया

संपादकीय

फटा पाइप, खाली टंकी और खुली व्यवस्था की पोल, जिंदा जल गए बारह लोग

रॉकेट का ज्ञान और दमकल में छेद

हम रोज एआई का ढोल पीट रहे हैं, रॉकेट और मिसाइल की सफलता की कहानियां सुना रहे हैं। दावा कर रहे हैं कि भारत विकास की राह पर तेजी से आगे बढ़ रहा है, लेकिन जमीनी हकीकत यह है कि हमारे शहरों में दमकल का पाइप तक ठीक नहीं है। एक घर में आग लगती है, पूरा परिवार मदद के लिए चिल्लाता है। मां बच्चे को सीने से लगाती है, दादा पोती को बचाने दौड़ता है, लेकिन बाहर खड़ी दमकल से पानी नहीं निकलता। पाइप जगह-जगह से फटा है और टंकी में पानी कम है। दूसरी दमकल आती है तो उसका भी यही हाल है। तब तक छह लोग जिंदा जल चुके होते हैं। यही है हमारा स्मार्ट इंडिया? एक ही रात में दो शहरों में हुए अग्निकांडों ने बारह लोगों की जान ले ली। एक ही परिवार के छह लोग खत्म हो गए। दादा-दादी, बहू, पोतियां और दो महीने का मासूम तक नहीं बचा। दूसरी जगह सराफा कारोबारी का पूरा परिवार धुएं में दम घुटने से मर गया। पत्नी, बेटी, बहुएं और सोलह साल का नाती सब काल के गाल में समा गए। रात के तीन बजे लोग सो रहे थे, आग लगी, धुआं भर गया और बाहर निकलने का मौका तक नहीं मिला। मदद पहुंची भी तो आधे घंटे बाद और वह भी बेअसर। कहीं पाइप में दबाव नहीं था, कहीं पानी की कमी थी। यह महज हादसा नहीं, व्यवस्था की घोर विफलता है, जिसकी कीमत बारह लोगों को अपनी जान देकर चुकानी पड़ी।

आज प्रशासन से बारह मौतें सवाल पूछ रही हैं कि हमारी जान जाने के लिए कौन जिम्मेदार है? नगर निगम और नगर पालिकाओं में बैठे भारी-भरकम अमले की जिम्मेदारी आखिर क्या है? क्या एसी कमरों में बैठकर फाइलों पर दस्तखत करना ही उनका काम है? हर नगर पालिका में फायर अधिकारी, इंजीनियर, सीएमओ और पूरा अमला है, लेकिन किसी ने दमकल चलाकर नहीं देखी, पाइपों की जांच नहीं की और टंकियों में पानी की उपलब्धता सुनिश्चित नहीं की। हर साल बजट पास होता है, मरम्मत के नाम पर लाखों रुपये खर्च होते हैं, लेकिन जमीन पर वही खटारा गाड़ियां और खराब पाइप नजर आते हैं। शर्मनाक यह है कि मौतों के बाद भी जिम्मेदार अधिकारी अलग-अलग बयान देकर अपनी जिम्मेदारी से बचने की कोशिश कर रहे हैं। कोई कहता है पाइप नहीं फटा, कोई इसे अफवाह बताता है तो कोई दमकल के समय पर पहुंचने का दावा करता है। अगर सब कुछ ठीक था तो इतनी मौतें कैसे हुईं? जांच के नाम पर लीपापोती बंद होनी चाहिए। जनता को जवाब चाहिए, बहाने नहीं।

जिम्मेदार केवल वे अधिकारी नहीं हैं जिन्होंने अपनी ड्यूटी नहीं निभाई, बल्कि वह पूरी व्यवस्था है जो नागरिकों की सुरक्षा को प्राथमिकता नहीं देती। बाजारों से टैक्स वसूलने में तत्पर नगरपालिकाएं सुरक्षा के इंतजाम करने में पीछे क्यों हैं? चालान काटने और अतिक्रमण हटाने के लिए अमला है, लेकिन आग बुझाने के लिए पर्याप्त पानी और सक्षम दमकल नहीं है। आखिर यह कैसी नगर सेवा है? विकास का पहला अर्थ नागरिकों की जान बचाना है। सड़कें और इमारतें बाद में बन सकती हैं, लेकिन इंसान की जिंदगी वापस नहीं लाई जा सकती। दो महीने का बच्चा और सोलह साल का किशोर व्यवस्था की नाकामी के शिकार हो गए। अब केवल शोक जताने और मुआवजे के चेक बांटने से काम नहीं चलेगा। चार लाख रुपये किसी मां की ममता या बच्चे की मुस्कान वापस नहीं ला सकते। इन मौतों की निष्पक्ष जांच होनी चाहिए और जिन अधिकारियों, कर्मचारियों तथा ठेकेदारों की लापरवाही प्रमाणित हो, उनके खिलाफ कठोर कानूनी कार्रवाई होनी चाहिए। जिम्मेदार अधिकारियों पर भी जवाबदेही तय हो और दोषियों को कानून के अनुसार सजा मिले। साथ ही हर नगर निकाय की दमकल, पाइप, पानी की टंकियों और अग्निशमन व्यवस्था का नियमित तकनीकी ऑडिट अनिवार्य किया जाए। उसकी रिपोर्ट सार्वजनिक हो और खामियां दूर होने तक जिम्मेदार अधिकारियों की जवाबदेही तय रहे। तभी अगली दिवाली पर किसी और परिवार को इस तरह अपनी जान नहीं गंवानी पड़ेगी। वरना हर साल सरकारें शोक जताती रहेंगी और जनता लाशें गिनती रहेगी।

आजकल

कथनी में स्वच्छता, करनी में कचरा क्यों पिछड़ी राजधानी ?

टॉप नौ से बाहर भोपाल, आइना है व्यवस्था का, सिर्फ नगर निगम के भरोसे साफ नहीं होगा शहर, करोड़ों का टैक्स आखिर जाता कहां है?

स्वच्छता रैंकिंग में भोपाल टॉप नौ शहरों की सूची से बाहर हो गया है। इंदौर, जबलपुर, ग्वालियर, रीवा, सागर, उज्जैन और देवास जैसे शहर आगे निकल गए, लेकिन झीलों का शहर और कभी स्वच्छता में अग्रणी रहने का दावा करने वाली राजधानी पिछड़ गई। इसकी बड़ी वजह आदमपुर खंती में कचरे का उचित निपटान नहीं होना है। शहर में रोज करीब 850 मीट्रिक टन कचरा निकलता है। इसके अलावा वर्षों से जमा कचरे का पहाड़ भी समस्या बना हुआ है। राष्ट्रीय हरित अधिकरण की फटकार के बावजूद स्थिति में अपेक्षित सुधार नहीं हुआ। केंद्रीय आवास एवं शहरी कार्य मंत्रालय ने स्वच्छ सर्वेक्षण में जमीन पर दिखाई देने वाली सफाई, नागरिकों की भागीदारी, कचरा प्रबंधन और कचरा मुक्त शहर जैसे मानकों पर विशेष जोर दिया है। इन कसौटियों पर भोपाल कमजोर साबित हुआ। पिछली बार बड़े आयोजनों के कारण शहर चमकता नजर आया था, लेकिन असली परीक्षा रोजमर्रा की सफाई व्यवस्था की थी।

सवाल सिर्फ नगर निगम का नहीं, नागरिकों की जिम्मेदारी का भी है। निगम की गाड़ी घर-घर आती है, लेकिन लोग गीला और सूखा कचरा अलग नहीं करते। दुकानदार सड़क पर कचरा फेंकते हैं और लोग पॉलिथीन नालों में डाल देते हैं। हर कोई सफाई की जिम्मेदारी दूसरे पर डाल रहा है। यही कथनी और करनी का अंतर है। दूसरी ओर, करोड़ों रुपये सफाई के नाम पर खर्च होने के बावजूद कचरा पॉइंट और नालों की स्थिति सवाल खड़े करती है। नगर निगम को अपने खर्च का हिसाब सार्वजनिक करना चाहिए। कचरे की ढुलाई के बजाय उसके वैज्ञानिक निपटान और पुनर्चक्रण पर निवेश जरूरी है। आदमपुर खंती को कचरे का पहाड़ नहीं, संसाधन केंद्र बनाना होगा।

समाधान दोतरफा है। निगम को हर वार्ड में कचरे से खाद, बायोगैस और उपयोगी वस्तुएं बनाने की व्यवस्था विकसित करनी होगी। साथ ही खर्च का सामाजिक ऑडिट भी होना चाहिए। नागरिकों को घरों में अलग-अलग डस्टबिन रखने और सड़क पर कचरा फेंकने की आदत छोड़नी होगी। इंदौर की सफलता का आधार प्रशासन के साथ नागरिकों की सक्रिय भागीदारी भी है। भोपाल को भी यही रास्ता अपनाना होगा। स्वच्छता नारा नहीं, संस्कार है। जब तक यह संस्कार घर और बाजार तक नहीं पहुंचेगा, राजधानी की रैंकिंग सुधरने वाली नहीं है।

जब दुनिया दो हिस्सों में बंटी, तब भारत बना बुद्ध

मिसाइलों के शोर में गूंजी भारत की शांति वाली आवाज, मोदी का मंत्र, यह युद्ध नहीं, संवाद का युग है, न रूस की गोद में, न यूक्रेन की छाया में, भारत मानवता के साथ



काला सागर से युद्ध का काला धुआं हटाने की पहल अगर कोई कर सकता है तो वह बुद्ध का देश भारत है। तीन साल से अधिक समय हो गया है, रूस और यूक्रेन की धरती खून से लाल हो रही है। एक तरफ टैंक हैं, दूसरी तरफ ड्रोन हैं। एक तरफ नाटो का दबाव है तो दूसरी तरफ महाशक्ति का अहंकार। पूरी दुनिया इस युद्ध में दो खेमों में बंट गई है। कोई हथियार दे रहा है तो कोई प्रतिबंध लगा रहा है, लेकिन इस शोर के बीच एक देश ऐसा है जो लगातार कह रहा है कि रुको, बात करो, गोली से नहीं, बोली से समाधान निकालो। वह देश है भारत। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का संदेश भी यही है कि युद्ध किसी समस्या का हल नहीं है, शांति ही एकमात्र स्थायी रास्ता है। यही भारत की बुद्ध वाली भूमिका है।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन और यूक्रेन के राष्ट्रपति वोलोदिमिर जेलेंस्की से फोन पर बातचीत में भारत की ओर से हरसंभव मदद देने की पेशकश की है। भारत शांतिपूर्ण समाधान की कोशिशों में सहयोग करने को तैयार है। भारत ने यूक्रेन युद्ध को केवल सामरिक दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि मानवीय दृष्टिकोण से भी देखा है। प्रधानमंत्री ने दोनों नेताओं के सामने यह स्पष्ट किया है कि खून-खराबा बंद होना चाहिए और बातचीत का रास्ता खुलना चाहिए। यह वही संदेश है जो प्रधानमंत्री ने समरकंद में दुनिया के सामने दिया था कि आज का युग युद्ध का युग नहीं है।

दुनिया के सामने सवाल है कि भारत ऐसा कैसे कर पा रहा है? जब अमेरिका और रूस के बीच अविश्वास है और रूस तथा नाटो आमने-सामने हैं, तब भारत दोनों पक्षों से संवाद कैसे बनाए हुए है? इसका जवाब भारत की हजारों साल पुरानी सभ्यता और विचार परंपरा में है। भारत ने दुनिया को युद्ध नहीं, बुद्ध का संदेश दिया है। हमने सम्राट अशोक को देखा है, जिन्होंने कलिंग युद्ध में लाशें देखने के बाद तलवार त्याग दी थी और धम्म का मार्ग अपनाया था। आज उसी विचार की झलक भारत की विदेश नीति में दिखाई देती है। हम किसी के दुश्मन नहीं हैं, किसी के अधीन नहीं हैं। हमारी विदेश नीति स्वतंत्र है और यही स्वतंत्रता हमें सभी पक्षों से संवाद करने की क्षमता देती है। रूस-यूक्रेन युद्ध ने दुनिया को आर्थिक संकट और खाद्य असुरक्षा की ओर भी धकेला है। रूस और यूक्रेन दोनों वैश्विक खाद्यान्न और ऊर्जा आपूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। युद्ध शुरू होने के बाद अंतरराष्ट्रीय बाजार में तेल और गेहूं की कीमतों पर असर पड़ा। अफ्रीका के कई देशों में खाद्य संकट गहराया। दोनों देशों के बीच खाद्य सुरक्षा जैसे मुद्दों पर सहयोग की जरूरत भी इसी कारण महत्वपूर्ण है। भारत की सोच है कि युद्ध का असर केवल सीमा तक सीमित नहीं रहता, बल्कि आम आदमी की थाली तक पहुंचता है। जब किसी देश का किसान युद्ध के कारण अपना खेत खोता है तो दुनिया के दूसरे हिस्सों में भी गरीब की थाली प्रभावित होती है। इसलिए शांति का संदेश केवल विदेश नीति नहीं, बल्कि आम आदमी की रोटी से भी जुड़ा हुआ है।

जेलेंस्की का दावा है कि भारत काला सागर में खाद्यान्न आपूर्ति के लिए गलियारा खोलने के प्रयासों में मध्यस्थता करने को तैयार है। यह दावा उन्होंने सोशल मीडिया पोस्ट के माध्यम से किया है। काला सागर वह महत्वपूर्ण समुद्री मार्ग है, जिसके जरिए यूक्रेन का अनाज दुनिया के अनेक देशों तक पहुंचता है। युद्ध के कारण इस मार्ग पर संकट पैदा हुआ और वैश्विक खाद्यान्न आपूर्ति प्रभावित हुई। यदि भारत इस दिशा में संवाद और मध्यस्थता की प्रभावी भूमिका निभा पाता है तो यह केवल यूक्रेन की मदद नहीं होगी, बल्कि पूरी मानवता के हित में एक महत्वपूर्ण पहल होगी। यही बुद्ध का रास्ता है, जिसमें सबके कल्याण की भावना सर्वोपरि है। भारत ने इस युद्ध के दौरान तीन स्तरों पर अपनी भूमिका निभाई है। पहला, मानवीय सहायता। युद्ध शुरू होने पर भारत ने ऑपरेशन गंगा के माध्यम से अपने हजारों छात्रों को सुरक्षित बाहर निकाला और यूक्रेन को दवाइयां तथा राहत सामग्री भेजी। दूसरा, आर्थिक स्वतंत्रता। अमेरिका के दबाव के बावजूद भारत ने रूस से तेल खरीदना जारी रखा, क्योंकि देश के एक सौ चालीस करोड़ लोगों के हित और ऊर्जा सुरक्षा सर्वोपरि हैं। तीसरा, शांति की अपील। जी-20 हो या जी-7, प्रधानमंत्री ने विभिन्न अंतरराष्ट्रीय मंचों पर यही संदेश दिया कि समाधान युद्ध के मैदान में नहीं, बातचीत की मेज पर निकलेगा।

कुछ लोग कहते हैं कि भारत को स्पष्ट रूप से एक पक्ष चुन लेना चाहिए कि वह रूस के साथ है या यूक्रेन के साथ। लेकिन यह सोच भारत की स्वतंत्र विदेश नीति और शांति प्रयासों की संभावनाओं को सीमित कर सकती है। यदि भारत किसी एक पक्ष के साथ पूरी तरह खड़ा हो जाए तो सभी पक्षों के बीच संवाद का अवसर कमजोर पड़ सकता है। आज भारत की कूटनीतिक ताकत यही है कि वह रूस, यूक्रेन, अमेरिका और यूरोप सभी से बातचीत कर सकता है। भारत का उद्देश्य किसी युद्ध से लाभ कमाना नहीं, बल्कि शांति और स्थिरता की संभावनाओं को मजबूत करना है। एक बात तय है कि युद्ध का अंत अंततः बातचीत से ही होगा। आज नहीं तो कल दोनों देशों को एक मेज पर बैठना ही पड़ेगा। फिर यह पहल आज ही क्यों न हो? प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की सोच भी यही है कि यदि शुरुआत से ही बातचीत का रास्ता अपनाया जाए तो हजारों जानें बचाई जा सकती हैं, लाखों घर उजड़ने से बच सकते हैं और दुनिया को बड़े आर्थिक संकट से राहत मिल सकती है। बुद्ध ने नफरत को नफरत से नहीं, प्रेम से जीतने का संदेश दिया था। आज रूस-यूक्रेन युद्ध के बीच दुनिया को उसी बुद्ध के विचारों की सबसे अधिक जरूरत है। भारत की सभ्यता और उसकी शांति की परंपरा दुनिया को यही संदेश देती है कि युद्ध के शोर से ऊपर उठकर संवाद, सह-अस्तित्व और मानवता का रास्ता अपनाना ही स्थायी समाधान है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

उत्तर प्रदेश में ओवैसी फैक्टर: भाजपा को फायदा, बाकी सबको भारी नुकसान

भाजपा-सपा की सीधी लड़ाई में तीसरा खिलाड़ी ओवैसी



उत्तर प्रदेश के चुनावों में अब एक और नाम बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। वह नाम है ओवैसी की पार्टी एआईएमआईएम। उत्तर प्रदेश में भाजपा, सपा, कांग्रेस और बसपा चारों मैदान में हैं। मुख्य लड़ाई भाजपा और सपा के बीच है, लेकिन ओवैसी की एंट्री ने पूरा गणित बदल दिया है। ओवैसी जहां भी उम्मीदवार उतारते हैं, वहां सीधा फायदा भाजपा को होता है और भारी नुकसान सपा, कांग्रेस और बसपा को होता है। यह बात 2022 के चुनाव में भी दिखी थी और अब और ज्यादा दिखेगी, क्योंकि मुस्लिम वोट अब एकतरफा नहीं रहा। सपा का पीडीए यानी पिछड़ा, दलित, अल्पसंख्यक का नारा मुस्लिम वोट पर बहुत टिका है। सपा मानती है कि मुस्लिम वोट उसका बंधुआ है, लेकिन ओवैसी ने इस बंधुआ मजदूरी को तोड़ दिया है। ओवैसी कहते हैं कि मुसलमान सिर्फ वोट देने की मशीन नहीं है, उसे टिकट भी चाहिए, हिस्सेदारी भी चाहिए और सम्मान भी चाहिए। यही बात मुस्लिम नौजवानों को पसंद आ रही है। कई सीटों पर, जहां मुस्लिम आबादी 30 से 40 प्रतिशत है, वहां ओवैसी का उम्मीदवार खड़ा होते ही सपा का पीडीए फेल हो जाता है, क्योंकि मुस्लिम वोट दो हिस्सों में बंट जाता है। आधा सपा को और आधा ओवैसी को। इस बंटवारे का सीधा फायदा भाजपा को मिलता है। भाजपा का कोर वोट तो बंधा हुआ है, उसमें बंटवारा नहीं होता।

कांग्रेस और बसपा को भी ओवैसी से नुकसान है। कांग्रेस मुस्लिम वोट पर दावा करती है, लेकिन जमीन पर उसका संगठन कमजोर है। मुस्लिम मतदाता कहता है कि कांग्रेस तो उत्तर प्रदेश में जीत ही नहीं रही, तो वोट क्यों खराब करें? ओवैसी कम से कम हमारी आवाज तो उठाते हैं। बसपा का भी हाल यही है। बसपा ने पहले दलित-मुस्लिम गठजोड़ से सत्ता पाई थी, लेकिन अब मुस्लिम बसपा से दूर जा रहा है और ओवैसी की तरफ देख रहा है। कई सीटों पर बसपा का मुस्लिम उम्मीदवार ओवैसी के आने से तीसरे नंबर पर चला जाता है और बसपा का दलित वोट भी बिखर जाता है। भाजपा इस खेल को बहुत अच्छे से समझती है। भाजपा कभी नहीं चाहती कि ओवैसी उत्तर प्रदेश से बाहर जाएं। भाजपा के रणनीतिकार जानते हैं कि जितना ज्यादा मुस्लिम वोट बंटेगा, उतना ज्यादा हिंदू वोट एकजुट होगा और हिंदू वोट एकजुट होगा तो भाजपा जीतेगी। इसीलिए भाजपा ओवैसी को खुला मैदान देती है। ओवैसी पर कभी ज्यादा हमला नहीं करती, बल्कि सपा और कांग्रेस को घेरती है कि देखो, ये मुस्लिम तुष्टीकरण करते हैं। इससे हिंदू मतदाता और ज्यादा भाजपा के पक्ष में गोलबंद होता है। यह एक सोची-समझी रणनीति है, जो पिछले कई चुनावों में सफल रही है।ओवैसी की पार्टी जिन सीटों पर ज्यादा असर डालती है, वे पश्चिमी उत्तर प्रदेश के अमरोहा, संभल, मुरादाबाद, बरेली और रामपुर तथा पूर्वांचल के आजमगढ़, मऊ, गाजीपुर और बलिया के अलावा बुंदेलखंड की कुछ सीटें हैं। इन सीटों पर 20 से 40 प्रतिशत मुस्लिम वोट है और यहां हार-जीत का अंतर पांच से दस हजार वोटों का होता है। अगर ओवैसी यहां पांच हजार वोट भी काट लेते हैं तो सपा, कांग्रेस और बसपा का खेल खत्म हो जाता है। 2022 में कई सीटों पर सपा दस हजार से कम वोटों से हारी और वहां ओवैसी को 15 हजार वोट मिले थे। यह आंकड़ा बताता है कि ओवैसी फैक्टर कितना बड़ा है।अब टिकट बंटवारे की बात करें तो भाजपा अपने सहयोगी दलों अपना दल, निषाद, सुभासपा और रालोद के साथ लगभग सीटों का बंटवारा फाइनल कर चुकी है। उसका जातीय गणित सेट है, लेकिन सपा और कांग्रेस में अभी भी सीटों की मांग को लेकर लड़ाई है। कांग्रेस ज्यादा सीटें मांग रही है और सपा कम देना चाहती है। इस बीच ओवैसी ने अकेले 50 से ज्यादा सीटों पर लड़ने का ऐलान कर दिया है। इससे सपा और कांग्रेस की टेंशन और बढ़ गई है। उन्हें अब हर मुस्लिम बहुल सीट पर दो लड़ाइयां लड़नी हैं, एक भाजपा से और दूसरी ओवैसी से। राम मंदिर, चंदा चोरी और एंटी-इनकंबेंसी के बीच ओवैसी एक नया नैरेटिव ला रहे हैं। वे कहते हैं कि राम मंदिर से मुसलमान को क्या मिला? चंदा चोरी का हिसाब हिंदू ही मांगें। मुसलमान को रोजगार, शिक्षा और सुरक्षा चाहिए।

इसी मुद्दे पर वे भाजपा और सपा, दोनों को घेरते हैं। भाजपा को संविधान के नाम पर और सपा को धोखे के नाम पर। इससे मुस्लिम मतदाता में यह संदेश जाता है कि सपा ने सिर्फ इस्तेमाल किया है और अब ओवैसी ही असली आवाज हैं। उत्तर प्रदेश के चुनाव में ओवैसी को हल्के में लेना सपा, कांग्रेस और बसपा के लिए आत्मघाती होगा। ओवैसी जीत भले ही एक-दो सीटों पर ही पाएं, लेकिन हार-जीत का फैसला 20 से 30 सीटों पर वही करेंगे और हर फैसले में फायदा भाजपा को होगा। अगर सपा, कांग्रेस और बसपा मुस्लिम वोट को एकजुट नहीं रख पाए तो पीडीए का फॉर्मूला कागज पर ही रह जाएगा और भाजपा का रास्ता आसान हो जाएगा। इसलिए असली लड़ाई अब सिर्फ भाजपा बनाम सपा नहीं है, बल्कि भाजपा बनाम सपा बनाम ओवैसी है। इस त्रिकोण में सबसे ज्यादा नुकसान सेक्युलर वोटों के बिखराव से ही होगा।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

गहराई से देखो, गलती पर नहीं, वजह पर जाओ

दूसरों को दोष देना सबसे आसान है, समझना सबसे मुश्किल

आज की दुनिया में सबसे तेज चलने वाली चीज क्या है? गाड़ी नहीं, गुस्सा। सड़क पर किसी ने हल्की सी टक्कर मार दी, कार्यालय में किसी ने रिपोर्ट देर से दी या घर में किसी ने चाय ठंडी कर दी, हमारा पहला प्रतिक्रिया होती है कि सामने वाला ही खराब है। इसी मानवीय प्रवृत्ति पर विकासवादी जीवविज्ञानी तारा-लिन कैमिलेरी ने अध्ययन किया है। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से जुड़ी रहीं कैमिलेरी बताती हैं कि हम सब एक ही मानसिक जाल में फंसे हैं। मनोविज्ञान में इसे ऐसी प्रवृत्ति के रूप में समझा जाता है, जिसमें हम दूसरों की गलती को उनका चरित्र मान लेते हैं, जबकि अपनी गलती के लिए परिस्थितियों को जिम्मेदार ठहराते हैं। हम देर से पहुंचते हैं तो कहते हैं कि रास्ते में जाम था, बॉस ने रोक लिया। दूसरा देर से पहुंचता है तो हमें लगता है कि वह लापरवाह है।

सड़क पर हादसे और घर में होने वाले झगड़ों की जड़ भी कई बार यही होती है। मान लीजिए, सड़क पर कोई गाड़ी आपकी कार को टक्कर मारकर निकल गई। आपका खून खौल उठेगा। आप सोचेंगे कि उसने शराब पी रखी होगी या वह लापरवाह है। लेकिन क्या आपने कभी सोचा कि हो सकता है उसके घर में कोई आपात स्थिति हो, उसकी रातभर नींद पूरी न हुई हो या उसकी गाड़ी के ब्रेक ही खराब हो गए हों? इसका अर्थ यह नहीं कि गलती को नजरअंदाज कर दिया जाए, बल्कि यह है कि फैसला सुनाने से पहले पूरी परिस्थिति समझी जाए। यही घर में भी होता है। पति तेज आवाज में बोलता है तो पत्नी को लगता है कि वह उसका सम्मान नहीं करता। पत्नी जवाब नहीं देती तो पति को लगता है कि वह उसे नजरअंदाज कर रही है। दोनों एक-दूसरे की गलती पर अटक जाते हैं, लेकिन उसकी वजह तक पहुंचने की कोशिश कोई नहीं करता। जब हम सिर्फ दोष तय करते हैं तो हमारा दिमाग गुस्से और प्रतिक्रिया के मोड में चला जाता है। इसके विपरीत, जब हम पूछते हैं कि किन परिस्थितियों ने यह स्थिति पैदा की, तो समाधान के रास्ते खुलने लगते हैं। एक छोटा सा सवाल हमारी सोच और प्रतिक्रिया का पूरा तरीका बदल सकता है।

समाज में भी हमें इसी सोच की जरूरत है। हमारा समाज सजा देने में बहुत विश्वास रखता है। नशा किया तो जेल भेजो, अपराध किया तो कठोर सजा दो। लेकिन केवल सजा से हर समस्या का समाधान नहीं होता। नशे की लत और अपराध के पीछे कई बार सामाजिक, आर्थिक और पारिवारिक परिस्थितियां भी होती हैं। जब व्यक्ति को रोजगार, उपचार, परामर्श और परिवार का सहयोग मिलता है तो सुधार की संभावनाएं बढ़ती हैं। इसका मतलब यह नहीं कि अपराध की जिम्मेदारी खत्म हो जाती है, बल्कि यह है कि न्याय के साथ सुधार की व्यवस्था भी जरूरी है। अगर कोई व्यक्ति कर्ज में डूब गया तो हम तुरंत कह देते हैं कि जुआ खेलता होगा या फिजूलखर्ची करता होगा। लेकिन हम यह नहीं पूछते कि क्या उसके घर में कोई बीमार था, क्या उसकी नौकरी चली गई थी या क्या उसे किसी ने गलत सलाह दी थी। दोष देना बंद करके वजह समझना शुरू करना ही वास्तविक न्याय की दिशा है। हम सब खुद को स्वतंत्र मानते हैं। दर्शनशास्त्र में इसे स्वतंत्र इच्छा कहा जाता है। इसी के आधार पर हम कहते हैं कि व्यक्ति चाहता तो दूसरा रास्ता चुन सकता था। लेकिन इंसान का हर फैसला उसकी जैविक स्थिति, आनुवंशिकी, जीवन के अनुभवों और मौजूदा माहौल से प्रभावित होता है। स्वतंत्र इच्छा का अर्थ मनमानी नहीं, बल्कि परिस्थितियों के बीच निर्णय लेने की क्षमता है। कोई व्यक्ति गुस्से में चिल्लाता है तो यह केवल उसका स्वभाव या चुनाव नहीं हो सकता। संभव है कि वह तीन रात से सोया न हो, मानसिक तनाव में हो या बचपन से उसने बातचीत का यही तरीका सीखा हो। जब हम इन परिस्थितियों को समझते हैं तो सामने वाले को राक्षस मानना बंद करते हैं और उसे इंसान की तरह देखने लगते हैं। तब दोषारोपण के बजाय सुधार और समाधान के रास्ते खुलते हैं।

आज रिश्ते क्यों टूट रहे हैं? क्योंकि हम साथी कम और जज ज्यादा बन गए हैं। सोशल मीडिया ने इस प्रवृत्ति को और बढ़ा दिया है। कोई वीडियो आया तो तुरंत टिप्पणी में गाली, कोई खबर आई तो तुरंत आरोप और ट्रोलिंग। बिना संदर्भ समझे, बिना वजह जाने हम फैसला सुना देते हैं। रिश्तों में इस आदत को बदलने के लिए कुछ छोटी बातें याद रखनी होंगी। पहली, तुरंत प्रतिक्रिया मत दीजिए। गुस्से में दस सेकंड रुकिए, गहरी सांस लीजिए और फिर बोलिए। दूसरी, यह पूछने के बजाय कि तुमने ऐसा क्यों किया, पूछिए कि ऐसी कौन सी परिस्थिति थी जिसने तुम्हें ऐसा करने के लिए प्रेरित किया। पहला सवाल आरोप लगाता है, दूसरा समझने का अवसर देता है। तीसरी, अपना पैमाना दूसरों पर भी लागू कीजिए। यदि आप चाहते हैं कि लोग आपकी थकान, परेशानी और मजबूरी समझें तो आपको भी दूसरों की परिस्थितियां समझनी होंगी। बच्चे ने होमवर्क नहीं किया तो डांटने से पहले पूछिए कि क्या वह डरा हुआ है, उसे समझ नहीं आया या वह थका हुआ है। कर्मचारी ने गलती की तो पूछिए कि क्या उसे सही प्रशिक्षण मिला था या उस पर काम का बोझ ज्यादा था। दूसरों को दोष देने से हमें एक सस्ती संतुष्टि मिलती है कि मैं सही हूं और वह गलत है, लेकिन यही संतुष्टि रिश्तों को कमजोर कर देती है। वजह समझने में थोड़ी मेहनत और धैर्य जरूर लगता है, लेकिन इससे रिश्ते बचते हैं और समस्याओं के समाधान निकलते हैं।

दूसरों को दोष देने के बजाय उनकी परिस्थितियों और वजहों को समझिए। रिश्तों में गुस्सा कम होगा और नए रास्ते खुलेंगे। ज्यादातर लोग बुरे नहीं होते, वे कई बार बुरे हालात में फंसे होते हैं। उन्हें तिरस्कार नहीं, समझ और जरूरत पड़ने पर सहारे की जरूरत होती है। इसका अर्थ यह नहीं कि गलत काम को सही मान लिया जाए, बल्कि यह है कि गलती के साथ उसके कारणों को भी समझा जाए। जब हम यह समझना शुरू करेंगे, तभी स्वतंत्रता का वास्तविक अर्थ भी समझ पाएंगे। आजाद होने का मतलब दूसरों को दोष देने की आजादी नहीं, बल्कि उन्हें समझकर खुद को बेहतर इंसान बनाने की आजादी है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

गोपालन गरीबी का नहीं, समृद्धि का रास्ता है

एक गाय कमाई के दस रास्ते कैसे खोलती है, गोबर और गोमूत्र अब कचरा नहीं, सोना हैं, बायो सीएनजी से बाजार तक, गांव की अर्थव्यवस्था का नया आधार

गांव में आज भी एक कहावत प्रचलित है कि जिसके घर में गाय होती है, उसके घर में कभी अभाव नहीं होता। यह कहावत सिर्फ भावना नहीं, एक पूरा अर्थशास्त्र है। पहले हर घर में गाय होती थी तो घर में दूध था, दूध से दही था, दही से घी था और घी से आमदनी थी। गोबर से खाद बनती थी, खाद से खेत लहलहाते थे और खेत से पूरा परिवार चलता था। फिर हमने मान लिया कि गाय घाटे का सौदा है। ट्रैक्टर आया, रासायनिक खाद आई, विदेशी नस्लों की गायें आईं और देसी गायों को सड़कों पर छोड़ दिया गया। नतीजा यह हुआ कि खेती की लागत बढ़ती गई, जमीन की उर्वरता प्रभावित हुई और किसान कर्ज में डूबता गया। आज फिर गाय की उपयोगिता समझ में आने लगी है। दरअसल, गोपालन सिर्फ पुण्य का काम नहीं, आजीविका और आर्थिक समृद्धि का माध्यम भी बन सकता है।

एक देसी गाय को पालकर देखिए, वह साल भर में क्या-क्या दे सकती है। वह रोज दस लीटर दूध नहीं देगी, लेकिन यदि पांच लीटर दूध देती है और दूध का बाजार भाव सौ रुपये लीटर है तो प्रतिदिन पांच सौ रुपये की आय हो सकती है। इसके अलावा गोबर से जैविक खाद बनाई जा सकती है। गोमूत्र से जीवामृत और जैविक कीटनाशक तैयार किए जा सकते हैं। बछड़े बड़े होकर खेती और अन्य कामों में उपयोगी हो सकते हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि गोबर से बायोगैस बनाकर घर का चूल्हा जलाया जा सकता है और बड़े स्तर पर बिजली तथा बायो सीएनजी का उत्पादन भी संभव है। इस तरह गाय दूध से शरीर, गोबर से खेत और उसके अन्य उत्पादों से परिवार की अर्थव्यवस्था को सहारा देती है। गोबर को कचरा समझने की मानसिकता बदलने की जरूरत है। दस हजार गोवंश वाली गौशाला में प्रतिदिन बड़ी मात्रा में गोबर निकलता है। इसका वैज्ञानिक तरीके से प्रसंस्करण किया जाए तो बायो सीएनजी, जैविक खाद और तरल खाद जैसे उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं। बायो सीएनजी का बाजार भी तेजी से विकसित हो रहा है। इससे गौशालाओं के लिए आय के नए रास्ते खुल सकते हैं। खाद किसानों को उपलब्ध हो सकती है, गैस बाजार में बेची जा सकती है और स्थानीय युवाओं को रोजगार मिल सकता है। इस तरह गौशाला केवल दान और सरकारी अनुदान पर निर्भर रहने वाली संस्था नहीं, बल्कि आत्मनिर्भर ग्रामीण उद्यम बन सकती है।

देसी नस्लों का संरक्षण इस पूरी व्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा है। हमने विदेशी नस्लों के आकर्षण में देसी गायों की उपेक्षा की। अलग-अलग नस्लों की दूध उत्पादन क्षमता, आहार की जरूरत और स्थानीय जलवायु के अनुकूल होने की क्षमता अलग होती है। देसी नस्लें भारतीय जलवायु और परिस्थितियों के अनुरूप विकसित हुई हैं। इनके संरक्षण और नस्ल सुधार के साथ दूध उत्पादन बढ़ाने की संभावनाओं पर काम करना चाहिए। सरकार का उद्देश्य भी देसी नस्लों की उत्पादकता बढ़ाकर किसानों की आय में वृद्धि करना होना चाहिए। देसी नस्लें बचेंगी तो गोपालन को आर्थिक आधार मिलेगा और ग्रामीण अर्थव्यवस्था मजबूत होगी।

गोपालन से समृद्धि का एक और रास्ता प्राकृतिक खेती है। गोबर की खाद और गोमूत्र से तैयार जैविक घोलों का उचित उपयोग करके रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों पर निर्भरता कम की जा सकती है। इससे खेती की लागत घटाने और मिट्टी की सेहत सुधारने में मदद मिल सकती है। हालांकि इसके लिए वैज्ञानिक तरीके से प्रयोग, मिट्टी की जांच और फसल की जरूरत के अनुसार खाद का उपयोग जरूरी है। जैविक और प्राकृतिक उत्पादों के लिए बाजार विकसित किया जाए तो किसानों को बेहतर मूल्य मिलने की संभावनाएं भी बढ़ेंगी। इस तरह किसान केवल अन्नदाता ही नहीं, ऊर्जा उत्पादक भी बन सकता है।

गोशालाओं को केवल धार्मिक आस्था के केंद्र के रूप में नहीं, बल्कि व्यवस्थित ग्रामीण उद्यम के रूप में भी देखना होगा। वहां दूध, घी, खाद, गैस और अन्य उत्पादों का पूरा हिसाब होना चाहिए। उत्पादन, प्रसंस्करण और विपणन की मजबूत व्यवस्था बनेगी तो गोपालन लाभकारी हो सकता है। आज का युवा नौकरी की तलाश में गांव छोड़ रहा है, क्योंकि उसे लगता है कि खेती और पशुपालन में पर्याप्त आमदनी नहीं है। उसे आधुनिक गोपालन, डेयरी प्रबंधन और जैविक उत्पादों के